International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 11-12-2025; Accepted: 26-01-2026; Published: 13-02-2026
Volume 12, Issue 1, 2026, Page No. 117-119

बाल विमर्श और डॉ. परशुराम शुक्ल की बाल कहानियाँ

वसुंधरा देसाई
शोध छात्रा, संगमनेर कॉलेज, पुणे विश्वविद्यालय, महाराष्ट्र, भारत

सारांश
मानव जाति की उत्पत्ति से लेकर हर काल, हर युग में बचपन एक जैसा ही रहा है, ना बच्चों की किलकारियाँ बदली है, ना ही उनका हँसना और ना रोना। अगर कुछ बदला है, तो वह है उन्हें मिलने वाला परिवेश और संस्कार। हर देश और वहाँ की संस्कृति के अनुसार बच्चों को संस्कार मिलते हैं। यही बच्चे भविष्य के जिम्मेदार नागरिक बनते हैं। तो अगर मानव जाति का उज्ज्वल भविष्य किसी पर निर्भर है, तो वह है बच्चों को मिलने वाले पारिवारिक और सामाजिक परिवेश पर। यह समाज और परिवार की ही जिम्मेदारी है कि वह बच्चों को एक हँसता–खेलता सुस्कारित बचपन दे। कई देशों में बच्चों को देश की अमूल्य संपत्ति माना जाता है। दुर्भाग्य वश भारत में उन्हें केवल एक मानव की संतान की दृष्टि से देखा जाता है। कुछ परिवारों में बच्चों को अच्छे संस्कार देना परम कर्तव्य माना जाता है। नि:संदेह वह बच्चे बहुत भाग्यशाली होते हैं। किंतु सभी बच्चों के नसीब में अच्छा परिवेश और संस्कार नहीं होते। ऐसे बच्चों के लिए ही बाल साहित्य का उत्तरदायित्व बढ़ता है। बच्चों को मनोरंजन के माध्यम से नैतिक संस्कार देना बाल साहित्यकार का परम कर्तव्य है। संतोष की बात यह है कि इस आधुनिक काल में भारत के कई बाल साहित्यकारों को अपने इस कर्तव्य का एहसास है, जो उनके लेखन से झलकता है। कलम के धनी डॉ. परशुराम शुक्ल द्वारा लिखित बाल कथा साहित्य समग्र के तेरह संग्रहों में उन्होंने मनोरंजन के माध्यम से बच्चों को उचित नैतिक मूल्यों के संस्कार देने का सफल प्रयास किया है।

मूल शब्दः बाल साहित्य, बाल विमर्श, बचपन, परिवार, नैतिक मूल्य, परिवेश, संस्कार

प्रस्तावना

सामान्यतः किसी भी विषय के पक्ष और विपक्ष में की गई चर्चा विमर्श कहलाता है। साहित्य में भी किसी विशेष विधा का सखोल अध्ययन, सकारात्मक या नकारात्मक चर्चा, परिसंवाद, अनुसंधान, समीक्षा, आलोचना विमर्श के अंतर्गत आता है। साहित्य में अनेक विमर्श प्रचलित हैं, स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, किसान विमर्श, आदिवासी विमर्श, किन्नर विमर्श आदि। जिस साहित्य में स्त्री संघर्ष, स्त्रियों के हक, उनके अधिकार, उनकी सामाजिक स्थिति आदि पर विस्तृत एवं गहन विवेचन या समीक्षा होती है, वह स्त्री विमर्श है। उसी प्रकार जहाँ दलितों का जीवन, उनके संघर्ष, उनके हक इन पर विचार विमर्श होता है, वह दलित विमर्श है। बाल जीवन से संबंधित सामाजिक स्थिति, उनके परिणाम, घटनाएँ, बाल जीवन से जुड़ा हुआ साहित्य, बाल विमर्श नाम से परिभाषित है।

बाल मनोविज्ञान आधारित बच्चों के लिए किया गया साहित्य लेखन बाल साहित्य कहलाता है। ऐसा साहित्य जिसमें बच्चों की खुशी, उनका मनोरंजन, संस्कार, नैतिक मूल्य आदि का समावेश हो वह बाल साहित्य है। अधिकतर बड़े ही बच्चों के लिए साहित्य लेखन करते हैं। बाल साहित्यकार बाल मनोविज्ञान का ज्ञाता होना आवश्यक है। बड़े होकर भी बच्चों के लिए बच्चा होकर लिखना बाल साहित्य लेखन की सबसे पहली कसौटी हो सकती है। "ऐसा साहित्य जो युग के अनुरूप मनोवैज्ञानिक तरीके से बालकों के मनोरंजन और ज्ञान के विस्तार के साथ जिज्ञासाओं का भी शमन करें वही सच्चा बाल साहित्य कहा जा सकता है।"[1]

शुरू में बड़ों के लिए आसान भाषा में सरल विषयों पर लिखा गया साहित्य ही बच्चों को दिया जाता था। बच्चों के लिए स्वतंत्र विधा के रूप में साहित्य लेखन संपूर्णतः आधुनिक काल की देन है। अपवाद स्वरूप आदिकाल तथा मध्यकाल में कुछ उदाहरण उपलब्ध है, जैसे सूर के पदों में बालकृष्ण की लीलाओं का वर्णन तथा तुलसी रामायण में राम के बाल काल का वर्णन। भारत में इन सबसे पूर्व भी पंडित विष्णु शर्मा द्वारा संस्कृत में लिखें 'पंचतंत्र' से बाल साहित्य की शुरुआत मानी जाती है। पंचतंत्र की कहानियाँ ने संपूर्ण विश्व के बाल साहित्य को प्रभावित किया है। हिंदी में बाल कहानी लेखन का आरंभ भारतेंदु युग से माना जाता है। इससे पूर्व राजा शिव प्रसाद सितारे हिंद द्वारा लिखित 'राजा भोज का सपना', 'बच्चों का इनाम' और 'लड़कों की कहानी' उल्लेखनीय बाल कहानियाँ हैं। इन्हीं से हिंदी में के मौलिक बाल कहानी लेखन की शुरुआत हुई। भारतेंदु द्वारा लिखित 'अंधेर नगरी चौपट राजा' बाल साहित्य की अनूठी मिसाल है। तत्कालीन अन्य प्रसिद्ध साहित्यकारों ने भी बच्चों के लिए कहानियाँ लिखी। उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की 'ईदगाह', 'बूढी काकी', 'गुल्ली डंडा'' 'दो बैलों की कथा' उत्कृष्ट बाल कथाएँ हैं। प्रेमचंद की इन कहानियों में बाल मानस उनकी सभी बारीकियाँ के साथ उपस्थित है। पाठ्य पुस्तक के माध्यम से इनमें से कई कहानियों ने बच्चों का मनोरंजन तो किया, साथ ही बच्चों पर नैतिक संस्कार भी किए। रविंद्र नाथ टैगोर द्वारा लिखित 'काबुलीवाला' और सुभद्रा कुमारी चौहान लिखित 'हींगवाला' बाल कहानियों की उत्कृष्ट मिसाल है।

बीसवीं सदी के शुरुवाती काल में अनेक प्रसिद्ध लेखकों ने रामायण और महाभारत जैसे धार्मिक ग्रंथों की कथाओं को सहज, सरल, बोधगम्य भाषामें बाल पाठकों के लिए लिखा। इस प्रकार की कहानियाँ केवल हिंदी में ही नहीं तो भारत की अधिकांश भाषाओं में लिखीं गई। भारतीय संस्कृति, इतिहास, पुराण के साथ बीरबल–अकबर, तेनालीराम, विक्रम और वेताल जैसी चतुराई पूर्ण मनोरंजक कहानियाँ भी प्रकाशित हुई। बाल साहित्य के प्रचार–प्रसार में बाल पत्रिकाओं का योगदान भी अभूतपूर्व रहा है। आज के समृद्ध बाल साहित्य की पूर्व पीठिका तैयार करने का महत्वपूर्ण कार्य बाल पत्रिकाओं ने किया है। पराग, बालसखा, नंदन, चंपक, चंदामामा, विद्यार्थी, शिशु आदि पत्रिकाओं ने दोहरी भूमिका निभाई है। एक तरफ तो उन्होंने स्वतंत्रता पूर्व भारत में राष्ट्रीय जागरण के साथ देशभक्ति की भावना को प्रज्वलित रखने का कार्य किया, तो दूसरी तरफ बच्चों में साहित्य के प्रति रुचि निर्माण की।

स्वातोंत्र्योत्तर काल में बाल साहित्य लेखन की ओर साहित्यकार गंभीरता से देखने लगे। इसी समय विदेशी भाषाओं से अनुवादित बाल कहानियों की जैसे बाढ़ सी आ गई थी। बाल साहित्य की

समृद्ध परंपरा शुरू करने का श्रेय इंग्लैंड के बाल साहित्य को दिया जाता है। अंग्रेजी के साथ रुसी, फ्रेंच, अमरीकी, जर्मन आदि भाषाओं की प्रसिद्ध कहानियों का अनुवाद प्रकाशित होने लगा। रोबिनसन क्रूसो, सिंड्रेला, सिंदबाद जहाजी आदि ऐसी ही कुछ कहानियाँ हैं। विष्णु प्रभाकर, हरि कृष्ण देवसरे, राष्ट्र बंधु श्री प्रसाद, रामधारी सिंह दिनकर, जयप्रकाश भारती, दिविक रमेश, स्नेहा अगरवाल, उषा यादव आदि साहित्यकारों ने बाल कथा साहित्य लेखन की परंपरा आगे बढ़ाई। जयप्रकाश भारती आधुनिक हिंदी बाल कथा साहित्य के प्रवर्तक के रूप में मान्यता प्राप्त हैं। उनका मानना है कि "बाल साहित्य कल्पना, आशा, उत्साह, उमंग, विश्वास और प्राणी मात्र के प्रति प्रेम की भावनाओं से छलकता है।"[2] 1957 में 'चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट' की स्थापना बाल साहित्य के क्षेत्र में मिल का पत्थर साबित हुई। बच्चों तक अच्छा बाल साहित्य पहुँचाना एवं बाल साहित्य लेखन को प्रोत्साहन देना इस संस्था का मुख्य उद्देश्य है।

इक्कीसवीं सदी में भी बाल साहित्य लेखन की यह परंपरा अनवरत चल रही है। आधुनिक भारत के बदलते स्वरूप के अनुसार बाल कथा साहित्य का फलक भी काफी बदल गया है, विस्तृत हो गया है। जीवन जीने के उपदेश के साथ ही आधुनिकता, विज्ञान तंत्रज्ञान आदि अनेक विषयों का समावेश अब बाल साहित्य में हो गया है। आज के बालक का जीवन काफी उलझा हुआ है, कार्टून्स, मोबाइल, वीडियो गेम आदि अनेक प्रलोभन उसे अपनी ओर आकृष्ट करते हैं। बदलती हुई जीवनशैली के कारण विभक्ति परिवार में अकेलेपन का शिकार बचपन को संभालने एवं सवारने की जिम्मेदारी एक कर्तव्य दक्ष बाल साहित्यकार की बनती है। परिवार में तनाव, माता–पिता का विभक्त होना, सिनेमा, दूरदर्शन एवं वीडियो गेम के माध्यम से भी हर तरफ मारपीट एवं हिंसा का प्रदर्शन बच्चों में आक्रमकता की भावना को बढ़ावा दे रहें हैं। बच्चों को स्वस्थ बचपन एवं उज्जवल भविष्य मिले इसके लिए आवश्यक है कि बालक के माता–पिता एवं समाज का प्रबोधन हो। बालक स्वयं दूसरों पर निर्भर होता है इसलिए वह अपनी परिस्थिति बदलने में अक्षम होता है। अतः बच्चों के लिए बाल साहित्य की जितनी आवश्यकता है, उतनी ही आवश्यकता उसके परिवार एवं समाज को है। बालक को कैसे अच्छा परिवेश प्रदान करें, यह बताने की जिम्मेदारी भी बाल साहित्य पर आती है। "बाल विमर्श एक प्रकार से बच्चों के प्रति सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक चिंता है। यह विमर्श बच्चों के अस्तित्व, उनके विकास, उनकी क्षमता और शक्ति पर सार्थक विचार है।"[3]

सिद्धहस्त बाल साहित्यकार डॉ. परशुराम शुक्ल ने विपुल बाल साहित्य लेखन किया है। बाल कविता, बाल कहानी, बाल नाटक, बाल धारावाहिक एवं सूचनात्मक साहित्य आदि बहुविध विधाओं में लेखनी चलाई है। बाल साहित्य लेखन में डॉ. शुक्ल को सूचनात्मक साहित्य का प्रवर्तक माना जाता है। नन्हे सम्राट पत्रिका में उनकी लिखी वृक्ष कथाएँ बहुत लोकप्रिय रही। उनके द्वारा लिखित बाल कहानियों के 13 संग्रह 'परशुराम शुक्ल बाल कथा साहित्य सामग्र' शीर्षक से प्रकाशित हुए हैं। बच्चों के लिए कहानियों का सृजन करने के पश्चात, उनके अभिभावकों के लिए भी शुक्ल जी ने बाल विमर्श की कहानियों का सृजन किया। जिसका उद्देश्य है, बच्चों को स्वस्थ परिवार एवं सुरक्षित समाज मिले।

बच्चों के लिए कहानियाँ तो अनेक साहित्यकारों ने लिखी। पंचतंत्र से लेकर आज के आधुनिक लेखकों तक हर लेखक की अपनी एक विशेषता रही है, जो बच्चों का मनोरंजन करती रही और साथ ही उन्हें जीवन जीने की नैतिक शिक्षा भी देती रही। बच्चों के लिए लिखी गई कहानियाँ सिर्फ बच्चे पढ़ते हैं, जो उन्हें जीवन में पथ प्रदर्शक सिद्ध होना आवश्यक है, जिससे वें योग्य इन्सान बन सकें। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि बच्चों की परवरिश में उनके आसपास का समाज परिवार इसकी बहुत अहम भूमिका होती है। बच्चों के साथ किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए? उन्हें कैसा वातावरण देना चाहिए? इसके लिए बच्चों का परिवार, विद्यालय, आस–पड़ोस इनका प्रबोधन भी आवश्यक है। माता–पिता की गलती के कारण बच्चों पर गलत संस्कार होते हैं। साधारण सी लगने वाली बात जीवन भर के लिए बच्चों की आदत बन जाती है। घर में दिन–रात होने वाले झगडे, भ्रष्टाचार, दुर्व्यवहार बच्चों के भविष्य को बिगाड़ देते है, कहानियों के माध्यम से बड़ों को बच्चों के लिए स्वस्थ परिवेश कैसे प्रदान करें यह बताना भी उतना ही आवश्यक है। समाज को उसके भविष्य के प्रति सजग करना साहित्यकार का कर्तव्य है। यहीं पर बाल विमर्श से जुड़े साहित्य का महत्व स्वयं सिद्ध है |

शुक्ला जी ने यह स्वयं मान्य किया है कि शुरू में उन्होंने केवल कल्पना प्रधान बाल कहानियाँ लिखि, जो नैतिक शिक्षा के साथ बच्चों का स्वस्थ मनोरंजन करती थी। जब उन्होंने अपने आसपास बच्चों की समस्याओं के मूल में जाने की कोशिश की तब उन्हें महसूस हुआ कि अच्छे साहित्य की जितनी आवश्यकता बच्चों को है, उससे कई अधिक आवश्यकता उनके परिवार एवं समाज को है जो बच्चों के भविष्य निर्माता है।

शुक्ल जी के साहित्य मे बचपन उसके हर रूप मे मौजूद है। कहानियों में झलकता बचपन प्राचीन से लेकर आधुनिक तक हर काल का प्रतिनिधित्व करता प्रतीत होता है। इन कहानियों में बाल कृष्ण की लीलाओं से लेकर बाल हनुमान के अजूबे हैं। विष्णु भक्त प्रह्लाद, गांधी जी के बचपन के साथ ही चंद्रशेखर आजाद जैसा निडर निर्भीक बालक भी बच्चों के प्रेरणा स्रोत बने हुए हैं। ""जेलर ने सोचा था कि बेत पडते ही बालक की चीख निकल आ जाएगी, किंतु बालक चीखा नहीं बल्कि जेलर की आँखों में आँखें डालते हुए बोला 'भारत माता की जय'।"[4] एक अन्य कहानी में पाँच साल के अजय की निडरता और साहस की घटना शुक्ल जी ने बताई है। जिसके परिवार के सभी सदस्यों को क्रांतिकारी गतिविधियों में सम्मिलित होने के कारण अंग्रेजों ने मार दिया था। यह कहानी हर एक बच्चे में साहस निर्माण कर सकती है। यह अगली पंक्तियाँ स्वतंत्रता की लड़ाई में छोटे बच्चों का योगदान ही बताती हैं–"गोपाल भैया में क्रांतिकारी बनूँगा। मैं देश को आजाद कराऊँगा। मैं अंग्रेजों से लडूँगा और उन्हें देश के बाहर निकालूँगा।"[5]

आधुनिक काल का प्रतिनिधित्व करते हुए गरीब मछुआरे का बेटा तपन, नौकरी न मिलने के कारण मज़बूरी में भीख मांगने वाली माता–पिता का होनहार बेटा करतार, अपने पिता की सहायता के लिए दर–दर भटककर सबूत इकट्ठा करने वाला प्रशांत, माँ की पीड़ा देख कर दिन रात मेहनत करके प्रथम आने वाला अनुज जैसे पात्रों के माध्यम से समाज के विविध स्तरों का बचपन समाज की जिम्मेदारी का अहसास करा रहा है। गरीब बच्चों को यदि सही समय पर उचित मार्गदर्शन और थोड़ी सी सहायता मिले तो उनका जीवन भी खुशहाल बना सकता है, जैसे उड़ान कहानी की सुषमा, भीख माँग कर अपना पेट भरने वाले कमली और भज्जू के बेटे करतार की सहायता करते हैं। जिससे करतार पढ़ लिखकर एक योग्य इन्सान बन जाता है। "समय बीतता गया करतार ने पाँचवी की परीक्षा पास कर ली। अभी तक की सभी परीक्षाएँ उसने केवल प्रथम श्रेणी में ही नहीं पास की थी, बल्कि प्रथम स्थान प्राप्त किया था। उससे सभी शिक्षक और छात्र बहुत खुश रहते थे।"[6] जैसा की बाल विमर्श में केवल सकारात्मक नहीं तो नकारात्मक पक्ष भी आता है। उसी प्रकार माता–पिता एवं समाज द्वारा प्रताड़ित बाल जीवन भी कहानियों में चित्रित किया गया है। सौतेले माता–पिता द्वारा सताए गए हुलुंग, तपन और सुनील की कहानियाँ। "तपन की आयु अभी दस वर्ष की भी पूरी नहीं हुई थी। भूपति का व्यवहार बहुत बुरा था। वह जब तपन को मारता तो तपन का मन रो देता। लेकिन माँ के प्यार से हाथ

फेरने पर वह अपना सारा दुख दर्द भूल जाता और घर के कामकाज में लग जाता।"[7]

बच्चों को बोझ समझने वाली शर्मिला की बेटी काजल, आधुनिक रहन–सहन और मोबाइल की दुनिया में व्यस्त माँ के बच्चे मीना और नीना, दिनभर संभालने वाली आया द्वारा सताया गया, नौकरी पेशा माता–पिता का बेटा शुभम, पिता के गलत संस्कारों के बलि चढ़े हुए मदन और आस्तिक, घास के पूले चुराते हुए अपने पिता के गलत संस्कार एवं डर के कारण चोर बने और अंत में सहृदय न्यायाधीश के करण जीवन जीने का नया मौका मिले हुए पंकज की कहानी। लॉकडाउन से परेशान निसर्ग और पार्थ, माता– पिता के विभक्त होने से आहत अनादि, निरीह जानवरों को सताने वाला वीरेंद्र आदि बच्चों के बचपन की हर एक की अपनी अलग कहानी हैं।

छोटे बच्चों के लिए उनके जीवन में सौतेली माता–पिता को स्वीकार करना बहुत ही कठिन कार्य होता है। अनादि भी अपने सौतेले पिता डॉक्टर पवन को स्वीकार नहीं कर पाता। "अनादि ने स्कूल से वापस आकर अपना कमरा देखा, तो चीख–चीख कर रोने लगा। उसने डॉक्टर पवन द्वारा लाए गए सभी खिलौने एक–एक करके कमरे के बाहर फेंक दिए और कमरे का दरवाजा बंद करके रोने लगा। मालती अपने बेडरूम की खिड़की की दरार से सब देख रही थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करें और क्या न करें। अनादि की सिसकियाँ उसे अभी भी सुनाई दे रही थी।"[8] यह सभी बच्चे एक स्वस्थ एवं पोषक पारिवारिक और सामाजिक परिवेश के हकदार है। जिनका हक स्वयं उनके माता–पिता द्वारा ही छीना जा रहा है। ऐसी परिस्थितियों में ही बाल विमर्श की कहानियों की आवश्यकता अधिक महसूस होती है। माँ के अंधविश्वास से परेशान महेश, निडरता से सैनिक स्कूल जाने वाला अभिनव, हर बच्चा दूसरे से अलग है फिर भी सबका मासूम बचपन एक समान है।

आजकल के आधुनिक युग में माता–पिता दोनों नौकरी करते हैं। विभक्त परिवार के कारण बच्चों को संभालने के लिए घर में कोई बुजुर्ग नहीं होता इसलिए मजबूरन बच्चों को संभालने के लिए किसी आया की नियुक्ति की जाती है। अधिकतर जगह पर यह पाया गया है कि माता–पिता के सामने तो यह आया बच्चों को प्यार से संभालने का अच्छा नाटक करती है और उनके परोक्ष बच्चों को सताती है, मारती पिटती है। समाचार पत्रों में भी ऐसी कई घटनाओं का उल्लेख हम देखते हैं। शुक्ला जी ने भी उनकी 'परवरिश' शीर्षक कहानी में इस समस्या को उठाया है।

कठोर अनुशासन से बच्चे कुछ समय के लिए डर कर अच्छा व्यवहार करते हैं किंतु जब तक उन्हें अनुशासन का महत्व समझ में नहीं आता तब तक स्थाई रूप से उनमें परिवर्तन नहीं होता। ठाकुर साहब कठोर अनुशासन से अपने बेटे को पढ़ना चाहते हैं तब मास्टर दीनानाथ उन्हें समझाते हैं दंड और शिक्षा की तुलना में स्नेह पूर्वक बताई गई बात बच्चों में अच्छा परिवर्तन लाती है। "कुँवर साहब का विश्वास था कि मार के भय से दूसरा बालक गिनती ठीक लिखेगा और जल्दी लिखेगा। किंतु उनके आश्चर्य का ठिकाना ना रहा, जब उन्होंने देखा कि वह गलत लिख रहा था और भय से बार–बार मास्टर साहब के बेत की ओर देख रहा था। इसके विपरीत पहले बच्चे ने पाँच मिनट में ही 1 से 100 तक गिनती बिल्कुल ठीक–ठीक लिखकर उनके सामने रख दी।"[9]

आज के आधुनिक युग में बच्चों के सामने अनेक प्रलोभन हैं, जिससे वह राह भटक सकते हैं। नौकरी पेशा माता–पिता बच्चों को आवश्यक समय देने की बजाय चॉकलेट, मिठाइयाँ, खिलौने आदि देकर उनका दिल बहलाना चाहते हैं। किंतु यह सारी चीजें माता–पिता के प्यार और संस्कार की जगह नहीं ले सकते। आवश्यकता से अधिक और माँगने से पहले मिलने वाली चीजों के कारण बच्चे जिद्दी अडियल और लापरवाह हो जाते हैं। तब 'अब पछताए होत क्या' जैसी स्थिति माता–पिता की हो जाती है। उन्हें अपनी गलतियाँ तो दिखती नहीं, बस बच्चों को सारा दोष दे देते हैं। घर में बुजुर्गों के साथ और आशीर्वाद से आज के बच्चे वंचित है। आसपास की चकाचौंध और भागदौड़ भरी जिंदगी में बच्चों का बचपन खो गया है। सही गलत का फैसला बच्चे नहीं कर पाते। उन्हें एक साथी और सच्चे मार्गदर्शक के रूप में बाल साहित्य ही दिशा दर्शक हो सकता है। उन्हें अच्छा साहित्य प्राप्त हो यह बाल साहित्यकार के साथ उनके अभिभावकों की भी जिम्मेदारी है।

संदर्भ

1. डॉ. भनोत नवज्योत, बाल साहित्य के सरोकार, विकास बुक कंपनी, नई दिल्ली, 2025, भूमिका, पृष्ठ–8
2. संपा. भारती जयप्रकाश, भारतीय बाल साहित्य का इतिहास, अखिल भारती, दिल्ली, 2002, भूमिका
3. दिविक रमेश, बाल विमर्श: बचपन पर संवाद (आलेख), साक्षात्कार, संपा. डॉ० विकास दवे, नवम्बर–दिसम्बर, 2020, अंक: 485–486 संयुक्तांक, पृष्ठ–34
4. डॉ. शुक्ल परशुराम, क्रांति कारियों की बाल कहानियाँ, विवेक पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2016, पृष्ठ– 88
5. डॉ. शुक्ल परशुराम, क्रांति कारियों की बाल कहानियां विवेक पब्लिशिंग हाउस जयपुर 2016 पृष्ठ 118
6. डॉ. शुक्ल परशुराम, बाल विमर्श की कहानियाँ, संजय प्रकाशन, दिल्ली, 2021, पृष्ठ–79
7. डॉ. शुक्ल परशुराम, लोक कथाओं पर आधारित बाल कहानियाँ, विवेक पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2015, पृष्ठ–118
8. डॉ. शुक्ल परशुराम, बाल विमर्श की कहानियाँ, संजय प्रकाशन, दिल्ली, 2021, पृष्ठ–174
9. डॉ. शुक्ल परशुराम, शिक्षाप्रद बाल कहानियाँ, विवेक पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2015, पृष्ठ–15